जनभागीदारी से सफल सिंचाई जल प्रबंधन

सी.एस.रघुवंशी
41/4,नेहरू नगर
निरंकारी भवन के पास
रूड़की - 247 667

सी.पी.सिन्हा
102, जयराज वसुधंरा
पूर्वी, बोरिंग कनाल रोड़
पटना - 800 001.

सारांश

भारत जैसे कृषि प्रधान देश में सिंचाई का अत्यंत महत्व है । स्वतंत्रता प्राप्ति के तुरंत बाद से प्राथमिकता के आधार पर इस देश में सिंचाई क्षमता का विकास किया जाने लगा और लगभग दो दशकों में ही इसमें पर्याप्त वृद्धि हुई । फलस्वरूप हरित क्रांति आई, कृषि पैदावार बढ़ी, उत्पादकता में बढ़ोतरी हुई और खाद्यान्न के मामलें में देश आत्मनिर्भर हुआ । कुछ ही समय बाद यह पाया गया कि कुल सृजित सिंचाई क्षमता का कुशल उपयोग नहीं हो रहा और सृजन एवं उपयोग में अन्तर है जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती । स्थिति में सुधार के लिए उचित प्रबंधन की ओर सरकार का ध्यान गया ! अनुभव से पाया गया कि सिंचाई जल प्रबंधन में सफलता के लिए उपभोक्ता की भगीदारी आवश्यक है । यह प्रक्रिया स्थानापेक्षिक है और इसकी रणनीति एवं विधि स्थानीय प्रचलित परिस्थितियों के आधार पर निर्धारित की जानी चाहिए । वर्तमान उदाहरण भी यहीं इंगित करते हैं ।

1.0 प्रवेश

इस देश में सिंचाई के लिए जल संसाधन का विकास एवं प्रबंधन जीवनमरण के प्रश्न जैसा महत्वपूर्ण है । फिलहाल देश में कुल व्यवहृत जल का लगभग 83प्रतिशत सिंचाई के क्षेत्र में उपयोग होता है ऐसा अनुमान लगाया गया है कि वर्ष 2050 में भी यह 79 प्रतिशत रहेगा । इसलिए यह अत्यंत आवश्यक है कि सिंचाई जल के कुशल प्रबंधन द्वारा क्षति एवं अपव्यय न्यमूनतम किया जाय और जल की बचत हो । ऐसा आंकलन है कि यदि सिंचाई जल की 10 प्रतिशत बचत हो, तो उससे लम्बी अवधि में घरेलू एवं औद्योगिक क्षेत्रों के उपयोग के लिए लगभग्र 40 प्रतिशत जल की उपलब्धता बढ़ जाएगी ।

सिंचाई जल प्रबंधन एक जटिल एवं विस्तृत प्रक्रिया है । इसका उद्देश्य कृषि क्षेत्र में सही समय पर सही मात्रा में जल की आपूर्ति कराना है ताकि कृषि की उत्पादकता में अधिकतम वृद्धि हो सके । फसल के बीजारोपण से परिपक्वता तक जल की विश्वसनीय एवं समयोचित आपूर्ति परमावश्यक है । सिंचाई जल प्रबधन की प्रक्रिया में केवल जल का अन्तर्ग्रहण, परिवहन, विनियमन, वितरण, मापन एवं खेत में जलोपयोग की विधि ही नहीं, बल्कि समय पर कृषि भूमि से प्रभावशाली जल जलनिकासी तथा लागत में कभी भी

शामिल है । सिंचाई एवं जलनिकासी के प्रबंधन की समस्या मुख्यतः सार्वजनिक क्षेद्ध की सिंचाई परियोजनाओं से संबंधित है और भौतिक सांस्थानिक आर्थिक एंव वित्तीय बाध्यताओं से प्रभावित है ।

सिंचाई जल प्रबंधन एक स्थानापेक्षिक प्रक्रिया है । यह स्थानीय स्थलाकृति, जलवायु, जल की उपलब्धता, मृदाभिलक्षण, फसल किस्म, आर्थिक सामाजिक स्थिति, आदि पर निर्भर है । जो माडल एक क्षेत्र के लिए सफल सिद्ध हुआ है, वह दूसरे इलाके में भी खड़ा उतरे, यह आवश्यक नहीं । अतः अध्ययन, अनुसंधान एवं पूर्वानुभव के आधार पर स्थान के अनुकूल प्रक्रिया विकसित की जानी चाहिए जो समय की कसौटी पर सही उतरे ।

इस देश में सिंचाई प्रबंधन की दो भिन्न व्यवस्थाएं चालू हैं एक जो बहुत पहले कृषक समुदाय द्वारा सामूहिक प्रयास से विकसित की गई और पीढ़ी दर पीढ़ी परंपरागत रूप से हस्तांतरित होती रहीं और दूसरी अपेक्षाकृत आधुनिक बडी-बड़ी सिंचाई परियाजनाओं के लिए सरकारी तंत्र द्वारा निकाली गई । पहली में कृषक की भागीदारी ही व्यवस्था का आधार है और दूसरी मूलतः कृत्रिम उपायों द्वारा संरक्षित है जिसमें किसानों की भागीदारी कुछ निश्चित फायदें उठाने तक ही सीमित है स्पष्टतः आज किसानों की पूरी और सही भागीदारी सुनिश्चित करना समय का तकाजा हे । यह भागीदारी परियोजनाओं के नियोजन से लेकर संचालन तक होनी चाहिए ।

2.0 पृष्ठभूमि

वर्ष 1947 में हुए देश के विभाजन के साथ सिंचित क्षेत्र का अधिकांश पाकिस्तान में चला गया और इस देश में खाद्यानन का उत्पादन आवश्यकता से बहुत कम होने लगा । फलस्वरूप पचास एवं साठ के दशकों में बड़ी मात्रा में अनाज का आयात करना पड़ा । देश के नियोजकों एवं नीति निर्धारकों के कान खड़े हुए और उन्होंने बहुत सही सिंचाई के द्वारा खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि के कार्याक्रम को उच्च प्राथमिकता दी, नतीजन हरित क्रांति का जन्म हुआ, सिंचाई क्षमता एवं कृषि की पैदावार में उल्लेखनीय वृद्धि हुई आरैर खाद्यान्न के मामले में देश आत्मनिर्भर बना । गत पांच दशकों में कुल सिंचित क्षेत्र एवं खाद्यान्न उत्पादन में चार गुनी से ज्यादा ही वृद्धि हुई । यह एक दिगर बात है कि इस विशाल एवं व्यापक कार्य क्रम से समान न्याय, पर्यावरण, जलनिकासी का अभाव, सिंचाई के सृजन और उपयोग में अन्तर, जल का अकुशल उपयोग आदि से संबंधित कुछ समस्याएं भी पैदा हुई जिनका समाधान होना बाकी है ।

उन्नीसवीं शताब्दी के पहले के सिंचाई कार्य मुख्यतः आहर, पईन एवं कुओं के निर्माण तक सीमित थे। कुछ राजाओं ने अपनी-अपनी रियायतों में विश्वसनीय जलपूर्ति की व्यवस्था करने की कोशिश की और कुछ सार्थक परियोजनाओं के निर्माण कराए भी । बाद में ब्रिटिश शासन ने जल संसाधन के विकास में महत्वपूर्ण परिवर्तन किए, अक्सर होने वाले सुखाड़ और अकाल के मद्देनजर उन्होंने सिंचाई के विकास पर खास ध्यान दिया और कुछ बड़ी संरक्षणात्मक सिंचाई परियोजनाओं का निर्माण किया । उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक सार्वजनिक एवं निजी कार्यो द्वारा सिंचित कुल क्षेत्र 1.32 करोड़ हेक्टेयर था।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-56) में सिंचाई के विकास का एक बड़ा कार्यक्रम शुरू हुआ और कई बड़ी बहुउद्देशीय परियोजनाएं निर्माण के लिए ली गई । नौवी योजना (1997-2002) के अन्त तक लगभग रू0 55,368 करोड़ की लागत से निर्मित वृहत्त, मध्यम एवं लघु सिंचाई परियोजनाओं से कुल सिंचाई क्षमता 10.66 करोड़ केक्टेयर हो गई । इस सृजित क्षमता के लगभग 20

प्रतिशत का उपयोग न हो पाना निराशाजनक है । इसके निराकरण के लिए सिंचाई कार्य समुचित प्रबंधन आवश्यक है । बाराबंदी या आवृत्ति सिंचाई जलापूर्ति से जलाभाव से होने वाले नुकसान को कम किया जा सकता है , किन्तु स्थिति से प्रभवशाली ढंग से निपटने के लिए पूरी सिंचाई प्रक्रिया में किसानों की भागीदारी परमावश्यक है । यहां उल्लेखनीय है कि इस प्रक्रिया में वे तभी शामिल होंगे जब इसमें रस्पष्ट रूप से फायदा नजर आएगा । वे प्रशासन की सुविधा के लिए कभी भी यह जिम्मेवारी नहीं लेंगे । अतः किसानों को इस काम के लिए लुभाने का उपाय करना होगा । इसके लिए पहले उचित एवं अनुकूल वातावरण बनाना होगा और व्यवस्था में प्रेरणादायी प्रावधान करने होंगे ।

3.0 प्रबंधन के उद्देश्य एवं प्रकार

अच्छे सिंचाई जल प्रबंधन की कसौटी प्रति इकाई जल की उत्पादकता, नहर के शीर्ष एवं पुच्छ खंडों में समान रूप से जल की उपलब्धता, बड़े एवं छोटे सभी किसानों में न्यायसंगत जल वितरण, उत्पादकता में ह्रास के बिना टिकाऊ सिंचाई व्यवस्था, भूजल स्तर में स्थिरता, किसानों के लिए जलापूर्ति की उपयोगिता तथा सिंचाई कार्य में लगे कर्मचारियों एवं अन्य लोगों के लिए प्ररेणाप्रद प्रावधान हो सकती है । इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए मुख्य प्रणाली का सही नियोजन एवं रूपांकरण, सतही जल एवं भूजल का संयुक्त् उपयोग, उचित फसल की किस्मों का प्रयोग, परियोजना का समुचित रखरखाव एवं संचालन, जलप्रवाह एवं जल निकासी मार्गो का पर्याप्त प्रावधान, कृषि भूमि पर जल का कुशल उपयोग तथा जलकर निर्धारण की उचित नीति आवश्यक हैं । वर्तमान सिंचाई प्रबंधन प्रणाली की कुछ कमियां हैं- पूरी सृजित सिचांई क्षमता के उपयोग में कमी, अविश्वसनीय एवं अपर्याप्त जलापूर्ति, अन्यायसंगत जल वितरण, आरवश्यक नियंत्रण की कमी, सत्तावादी एवं असंवदेनशील प्रशासन, कदाचार तथा पूरी प्रणाली में निम्नस्तर की कुशलता । अब तक का अनुभव बताता है कि वर्तमान गतिहीनता की स्थिति में गुणात्मक सुधार के लिए सिंचाई जल प्रबंधन में उपभोक्ता की भरपूर भागीदारी अत्यावश्यक है ।

अब महत्वपूर्ण प्रश्न यह उठता है कि सिंचाई के प्रबंधन में किसानों की भागीदारी सुनिश्चित कैसे की जाय ? भारत जैसे विशाल देश में जहां विभथ्न क्षेत्रों में सामाजिक एवं आर्थिक असंतुलन है तथा और भी कई तरह की भिन्नताएं हैं, सही तरीके का चुनाव थोड़ा कठिन है, फिर भी स्थानीय परिस्थिति की विशिष्टता के आधार पर पूर्वानुभव का ख्याल रखते हुए नीति का निर्धारण किया जाना चाहिए । देश में इस विषय पर लगभग दो दशकों से जोरदार चर्चा चलती रही है और ऐसा विचार सामने आया है कि वर्तमान काल में सरकार द्वारा प्रबंधित अपेक्षाकृत बड़ी सिंचाई परियोजनाओं में चक या लघुवितरणी स्तर पर किसानों का अनौपचारिक समूह बनाया जाय या उपयुक्त सिंचाई अधिनियम के तहत किसानों का औपचारिक संगठन बने या नहर के विभथ्न स्तरों पर किसानों की सहकारी समितियों का गठन हो या सिंचाई कम्पनी के रूप में किसानों का व्यावसायिक संगठन बने जो सरकार से पानी खरीदे और सदस्य किसानों में नियम दर पर उसका विक्रय करें ।

किसानों का कोई भी अनौपचारिक संगठन भरसक टिकाऊ और स्थायी नहीं होगा । इसकी सफलता की पहली शर्त जल की विश्वसनीय आपूर्ति है । तीन से पांच वर्षो के लिए अनौपचारिक समूह बनाए जा सकते हैं और अनुभव के आधार पर उन्हें औपचारिक रूप दिया जा सकता है । इसके लिए सतत् अथक प्रयास करने होंगे । पिलीर्पीनस में वितरणी स्तर पर इस तरह के समूह संगठित किए गए जिनमें सामाजिक कार्यकर्ताओं ने किसानों को प्रेरित एवं प्रशिक्षित किया । बाद में किसानों ने स्वयं उनकी जगह ली और संगठन को विस्तृत करते हुए उसे परियोजना स्तर तक पहुंचाया । इस देश में दो तरह की सिंचाई

परियोजनाएं हैं -- एक समुदाय द्वारा विकसित और दूसरी सरकारी तंत्र द्वारा निर्मित । पहली में किसानों की भागीदारी स्वयं सुनिश्चित है और पूरे प्रबंधन की रीढ़ की हड्डी है । दूसरी कोटि में मुख्यतः वृहत्त नदी धाटी परियोजनाएं हौ और उनसे लाभान्वित किसान सामान्यतः कृत्रिम उपायों द्वारा संरक्षित हैं तथा उपलब्ध फायदों के अलावा परियोजना के संचालन या प्रबंधन से भरसक कोई मतलब नहीं रखते । यह सही स्थिति हरगिज नहीं कही जा सकती । चूंकि ऐसी परियोजनाएं आकार में बड़ी हैं, मुख्य प्रणाली का प्रबंधन एवं रखरखाव सरकार के जिम्मे रह सकता है, किन्तु जल वितरण के स्तर पर किसानों को स्वयं पहल करनी चाहिए और उसका प्रबंधन अपने हाथ् में ले लेना चाहिए । इस संदर्भ में किसानों की सहकारी समितियां बहुत उपयोगी भूमिका निभा सकती हैं ।

यह स्पष्ट है कि सिंचाई सहकारी संगठन विभिन्न सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों में एक उपयोगी संस्था है । कई देशों में सिंचाई प्रबंधन में किसानों की पारंपरिक भागीदारी की सफलता की कहानियां मौजूद हैं। फिलीपीन्स की जंजीआरा, बाली द्वीप (इंडोनेशिया) की सुबक प्रणली, तथा जापान की सिंचाई सहकारी संस्थाएं सर्वविदित हैं । ऐसी अधिकतर संस्थाओं का संगठन स्थनीय आवश्यकताओं के आधार पर वहीं के लोगों ने अपनी स्थिति में सुधार लाने के उद्देश्य से स्वयं किया । इस देश के अधिकतर राज्यों में सिंचाई सहकारी संस्थाओं को संगठित करने के लिए कानून का समर्थन प्राप्त है और ऐसा करना विकास के लिए की गई किसी भी सामुदायिक गतिविधि जैसा माना जाता है, इसमें कुछ समस्याएं भी हैं, किन्तु मौलिक समस्या सिंचाई सहाकरी समंस्थाओं के स्वरूप से नहीं, बल्क समर्पित एवं सशक्त कृषक नेतृत्व के अभाव से है । आज हम जिस तरह के उग्र समाज में रह रहे हैं और इस पर जिस तरह का सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक दबाव निरंतर रहता है उसके चलते वांछित नेतृत्व उभरकर सामने नहीं आता फिर भी निराशा की गुंजाइश नहीं । प्रभवशाली प्रसार एवं प्रशिक्षण द्वारा सफलता अवश्य पाई जा सकती है । उल्लेखनीय है कि इसके लिए केवल किसानों को ही नहीं, बल्कि सरकार को भी जोरदार ढंग से प्रेरित करना होगा ।

3.1 उदाहरण

जैसा कि पहले भी उल्लेख हैं, सिंचाई जल प्रबंधन की समस्या हर क्षेत्र में अलग है और यह आवश्यक नहीं कि एक जगह सफल सिद्ध हुआ कोई माडल दूसरी जगह के लिए भी उपयुक्त हो । फिर भी नीचे कुछ उदाहरणों का संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है ताकि उनकी विशेषता समझकर उनसे प्रेरणा ली जा सके और उचित फायदा उठाया जा सके ।

3.2 जाबो प्रणाली

जाबो का अर्थ है जल को अवरूद्ध करना । यह प्रणाली नागालैंड के केक जिले के किकरूमा गांव में किसान समुदाय द्वारा विकसित की गई । यह गांव औसत समुद्रतल से 1270 मीटर की ऊंचाई पर अवस्थित है और दक्षिण तथा उत्तर दो नदियों से घिरा है । नदी तटों की ढाल अत्यधिक है जिसके कारण कोई चबूतरा या सिचांई के लिए कोई नहर बनाना संभव नहीं है । इसलिए ढाल के मध्य में किसानों ने सामुदायिक प्रयास से एक पोखर बनाया है जिसमें ऊपर से आ रहे वर्षाजल को जमा किया जाता है । पोखर के ऊपर वाले क्षेत्र पर पेड़ लगाए गए है और उसके नीचे धान के खेत हैं जिनमें पोखर के जल से सिंचाई होती है । पोखर की बगल में मवेशीशाला है जिसमें जानवर रखे जाते हैं और उनके मलमूल को बहाकर नालों के द्वारा खेतों में डाल दिया जाता है । इससे खोतों को कार्बनिक उर्वरक प्राप्त हो जाता है

और रासायनिक खाद की आवश्यकता नहीं पड़ती। धान के खेतों में मत्स्यपालन भी किया जाता है । पोखर के ऊपर गाद अवरोधक बेसिन बनाया गया है जिसका रूपांकण बिल्कुल वैज्ञानिक है । बेसिन तथा पोखर में जो भी गाद जमा हो जाती है उसकी सफाई सामुदायिक प्रयास से की जाती है । यह प्रणाली पूरी तरह जन सहयोग से विकसित तथा प्रबंधित है । इसमें सरकार कोई हस्तक्षेप नहीं करती ।

3.3 सुखोमाजरी सिंचाई प्रबंधन

चंडीगढ़ में 1958 में मनोरंजन के लिए कृत्रिम तरीके से सुखना झील का निर्माण किया गया । लगभग 15 वर्षो में ही गाद जमा होने से इसकी 60 प्रतिशत भंडारण क्षमता का ह्रास हो गया तथा झील क्षेत्र में जहां-तहां मिट्टी के छोटे-छोटे टापू उगने लगे जिनसे नौका विहार में बाधा पड़ने लगी । जलग्रहण क्षेत्र से आने वाली गाद को रोकने के लिए सुखना नदी की मुख्य सहायक कंसाई नदी पर सुखोमाजरी गांव में 1975 में एक परियोजना शुरू की गई जिसमें विभिन्न धाराओं पर 6 मीटर, 12 मीटर तथा 6.5 मीटर ऊंचे तीन मिट्टी के बाँध क्रमशः 1976,1978 तथा 1981 में बनाए गए । इनसे गाद तो जलाशय में रूका ही, जल का भंडारण भी हुआ जिसका उपयोग सिंचाई के लिए हो सकता है । परियोजना में स्थनीय सभी लोगों की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए जल वितरण का एक अनोखा तरीका अपनाया गया । सन् 1980 में जल उपभोक्ता संघ बनाया गया जिसे बाद में पर्वत संसाधन प्रबंधन सोसाइटी का नाम दिया गया । इस संस्था को ही पर्वत के संरक्षण, बांधों के रखरखाव, जल के वितरण एवं प्रबंधन का जिम्मा दिया गया । इस प्रबंधन की उल्लेखनीय विशेषता है कि इसमें जल का आबंटन आदमी को किया जाता है न कि जमीन को । इसके अन्दर हर परिवार को भूस्वामित्व तथा फसल की किस्म का ख्याल किए बिना उपलब्ध जल का बराबर-बराबर हिस्सा दिया जाता है । जो भूमिहीन हैं और जिन्हें जल का उपयोग नहीं करना ळै वे अपना हिस्सा नियम दर पर किसी अन्य सदस्य या सोसाइटी को बेच सकते हैं । इस व्यवस्था को 'हकबंदी' कहा जाता है । स्पष्ट है कि इस प्रबंधन से कमान क्षेत्र में रहने वाले हर व्यक्ति को कुछ फायदा है और इसके चलते वह परियोजना के लिए दर्द महसूस करता है तथा इसके संरक्षण के लिए सदैव तैयार रहता है । इसी अर्थ में इसे 'सामाजिक घेराबंद' कहा जाता है ।

3.4 मोहिनी जल सहकारी सोसाइटी

गुजरात के सूरत जिले के चोरयासी तालुके के मोहिनी गांव में मुख्यालय के साथ सितम्बर 1978 में उकई ककरापार परियोजना के मेस्टन माइनर के लिए इस सोसाइटी का निबंधन हुआ और इसने मार्च 1979 से काम करना शुरू किया । इस माइनर का कमान क्षेत्र 488 हेक्टेयर है जिसमें मुख्यतः गन्ने की खेती होती है । सोसाइटी सरकार से 3 रूपये प्रति 100 घनमीटर की दर से जल का क्रय करती है और सदस्यों को क्षेत्रवार दर से वितरित करती है । व्यवहारिक कारणों से नाप कर जल का वितरण संभव नहीं है, फिर भी चूंकि प्रबंधन सदस्यों द्वारा ही किया जाता है, जल की बर्बादी अधिक नहीं होती और कुल मिलाकर सोसाइटी को आर्थिक लाभ ही होता है और उससे प्रबंधन का खर्च पूरा हो जाता है । सोसाइटी का काम प्रशसनीय एवं अनुकरणीय रहा है और इसका श्रेय श्री भिक्खू भाई पटेल के गतिशील नेतृत्व को जाता है । इससे सफल प्रबंधन के लिए नेतृत्व की महत्ता प्रमाणित होती है ।

3.5 सुबक प्रणाली

इंडोनिशिया के बाली द्वीप में निर्मित मातृगंगा सिंचाई परियोजना बहुत पुरानी है । निर्माण के कुछ समय बाद उसके संचालन एवं प्रबंधन में लगभग वही सब समस्याएं पाई गई जो इस देश में पाई जा रही हैं । वहां के तत्कालीन राजा ने कमान क्षेत्र के सभी किसानों को संभवतः सन् 1076 में एक दिन एक मंदिर परिसर में एकत्र किया और बताया कि उस परियोजना का प्रबंधन सरकारी तंत्र के लिए कठिन हो रहा है । उन्होंने प्रबंधन की पूरी जिम्मेवारी उपभोक्ताओं को सौंपनी चाही । किसानों की सहमति होने पर ऐसा ही किया गया । इससे एक नई संस्कृति पैदा हुई और सिंचाई जल प्रबंधन सामाजिक गतिविधि बन गई । विभिन्न स्तरों पर सुबक समितियों का गठन हुआ जिसने सिंचाई प्रबंधन के साथ् अन्य सामाजिक सम्रस्याओं पर भी ध्यान दिया और समाधन निकाले । सरकार इन समितियों के कार्यकलाप में कोई हस्तक्षेप नहीं करती, बल्कि आवश्यकतानुसार बढ़ावा देती है । यह व्यवस्था इतने लंबे इरसे से सफलता पूर्वक चल रही है और इसी के चलते बाली का समाज कृषि पर आधारित एवं कृषि से बेहद प्रभावित हो गया है ।

3.6 बिहार माडल

बिहार सिंचाई अधिनियम 1997 में भागीदारी सिंचाई प्रबंधन का प्रावधान किया गया है । सिंचाइ परियोजनाओं के संचालन, रखरखाव तथा प्रबंधन में उपभोक्ताओं की भागीदारी करा मामला गत दो दशकों से ज्यादा समय से चर्चा में रहा है औरे इसकी वकालत की जा रही है । बिहार में सबसे पहले 1996-97 में पटना नहर से निकली पालीगंज वितरणी को स्थनीय जल उपभोक्ता संध को स्थनांतरित किया गया । सौभाग्यवश इस संगठन को श्री वाल्मीकि शर्मा का गतिशीलन एवं सक्रिय नेतृत्व प्राप्त है । चार वर्षो बाद इस संगठन के कार्यकलाप का मूल्यांकन किया गया तो जलकर वसूली के अलावे बाकी सभी मुद्दों पर उत्साहजनक नतीजे पाए गए इस माडल की विशेषत है कि जल उपभोक्ता संगठन में शामिल किसान दूसरों को ऐसा ही करने के लिए प्रेरित एवं प्रोत्साहित करते हैं ।

4.0 उपसंहार

इस देश में सिंचाई जल का प्रबंधन सरकारी तंत्र सफलतापूर्वक नहीं कर पाया । शुरू की पंचवर्षीय योजनाओं में प्राथमिकता के आधार पर सिंचाई क्षमता का महत्वपूर्ण विकास किया गया । इसका उत्साहवर्द्धक परिणाम भी सामने आया। जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि के बावजूद देश खाद्यान्न के मामले में आत्मनिभग्र बना । कुछ समस्याएं भी पैदा हुई । सत्तर के दशक से पाया गया कि सृजित सिंचाई क्षमता एवं उसके वास्तविक उपयोग में अवांछनीय अंतर है । इसे कम करने के लिए सिंचाई जल प्रबंधन आवश्यक है जो उपभोक्ता की सजग एवं सक्रिय भागीदारी से सफलतापूर्वक किया जा सकता है ।

संदर्भ

पटेल, वी.पी.एवं बुच, डी.टी. (1991) वाटर को-आपरेटिव इन कंटेक्स्ट आफ फार्मर्स पार्टिसिपेशन एंड इक्विटेबल वाटर मैनेजमेंट, वाटर मैनेजमेंट जरल, वाटर मैनेजमेंट फोरम, द इन्स्टीचयुशल ऑप इंजीनियर्स (इंडिया), अहमदाबाद, जुलाई अंक ।

एन.सी.आई.डब्ल्यू.आर.डी.पी. (1999) रिपोर्ट, नेशनल कमीशन फार इंटिग्रेटिड वाटर रिसोर्सेज डेवलपमेंट प्लान, जल संसाधन मंत्रालय, भारत सरकार , नई दिल्ली ।

सिन्हा, सी.पी.एवं रघुवंशी, सी.एस. (2000) सस्टेनेबल इंटिग्रेटेड वाटरशेड मैनेजमेंट एंड द कम्युनिटी एफार्ट फार द सेम इन द नोर्थ ईस्टर्न रीजन आफ इंडिया. प्रोसिडिंग्स, इंटरनेशनल कांफ्रेंस आन इंटिग्रेटेड वाटर रिसोर्सेज मैनजमेंट फार सस्टेनेबल डेवलपमेंट, दिसम्बर 19-21, नई दिल्ली ।